National Journal of Multidisciplinary Research and Development
ISSN: 2455-9040
Impact Factor: RJIF 5.22
www.nationaljournals.com
Volume 3; Issue 1; January 2018; Page No. 589-590

वैश्वीकरण की अवधारणा एवं उसके प्रभाव का मूल्यांकन

मुकेश कुमार यादव
शोधछात्र, हिन्दी विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

वैश्वीकरण का शाब्दिक अर्थ–स्थानीय वस्तुओं एवं घटनाओं के विश्व स्तर पर रूपान्तरण की प्रक्रिया है। वैश्वीकरण की मूल अवधारणा अर्थकेन्द्रित है। अपने एक भाषण में फिदेल कास्त्रो स्पष्टतः कहते हैं कि– ''नवउदारवाद वैश्वीकरण बिल्कुल साफतौर पर तीसरी दुनिया का फिर से उपनिवेशीकरण है।.... मेरा दृढ़तापूर्वक तथा बगैर हिचक के कहना है कि विदेशी निवेश के बदले में किसी देश की सम्पदा और प्राकृतिक संसाधनों का निजीकरण करना बहुत बड़ा अपराध है।''[1]

औद्योगिक क्रांति के बाद जब पूंजीवादी देशों में पूंजी का संग्रह शुरू हुआ तो एक समय के बाद वहां के लोगों की जीवन शैली सर्व सुविधा सम्पन्न हो गई और सेचुरेटेड प्वाइंट' पर पहुंच गई। जिसके बाद पूंजीवादी देशों को नए बाजारों की तलाश हुई क्योंकि एक तो उनके यहाँ जनसंख्या कम थी और ऊपर से जो जनसंख्या थी उसकी भी जरूरते कम हो गई। इसलिए पूंजीवादी देशों ने तीसरी दुनिया के देशों की ओर रूख किया क्योंकि वे गरीब, अभावग्रस्त लोग थे यहां कार्यबल (मजदूर) भी था। विकास का नाम नहीं था जिसकी वजह से पूंजीवादी देशों के लिए एक बड़ा बाजार खुला था। इसलिए इन पूंजीवादी देशों को वैश्वीकरण की जरूरत महसूस हुई और उन्होंने संयुक्त राष्ट्र संघ, वैश्विक आर्थिक मंच, विश्व बैंक जैसी अनेक संस्थाओं द्वारा तीसरी दुनिया के देशों के द्वार खोले गए और उनके श्रम, उनकी पूंजी, उनके प्राकृतिक संसाधनों की लूट की गई वैश्वीकरण के माध्यम से।

इसका सबसे अच्छा उदाहरण अपना देश भारत है, जब हमारा विदेशी मुद्रा कोष लगभग खाली हो गया तो विश्व बैंक ने हमें इस शर्त पर धन दिया कि हम अपने द्वार विदेशी निवेश के लिए खोलें। और नब्बे के दशक में नई आर्थिक नीति आई भारत में वैश्वीकरण के वर्तमान दौर की शुरूआत उदारी करण के पश्चात् मानी जा सकती हैं यह हकीकत है कि नब्बे के दशक में बहुप्रचारित विश्व बाजार व्यवस्था के तहत भूमंडलीकरण की प्रकृति से भारत भी अछूता नहीं रहा सकता था। विदेशी मुद्रा की कमी भारत का एक प्रमुख संकट था। प्रतिक्रियास्वरूप भारत ने अर्थव्यवस्था को खोल नई शासन नीति ने मौलिक, खुली और बाजार आधारित अर्थव्यवस्था को आगे बढ़ाया। नब्बे के दशक के प्रारम्भ में उदारीकरण के हिस्से में शुरू किए गए प्रयासों में प्रमुख रूप से औद्योगिक लाइसेन्सिंग व्यवथा को निरस्त किया जाना तथा सार्वजनिक क्षेत्र के लिए आरक्षित क्षेत्रों की संख्या में कमी करना शामिल है।एन्थोनी गिडेन्स अपनी पुस्तक 'द कन्सेक्वेन्स ऑप मॉडरनिटी' में लिखते हैं कि – ''वैश्वीकरण का अर्थ विश्व भर के सामाजिक संबंधों को इतना प्रचण्ड बना देना है कि दूर–दराज के क्षेत्रों में जो कुछ भी स्थानीय स्तर पर घटता हो, उसे हजारो मील दूर घटने वाली घटनाएं तय करें।'' जिससे शुरू में जहां कुछ क्षेत्रों में विदेशी निवेश को खोला गया वहीं आज स्थिति है कि गिने चुने क्षेत्र हैं जहां विदेशी निवेश नही है।

एक समय था जब वैश्वीकरण की संकल्पना को आर्थिक विश्लेषण के बढते हुए वैश्विक महत्व के रूप में परिभाषित किया जाता था बाद में इसमें और भी कई पहलू शामिल हो गए जैसे– अंतरराष्ट्रीय व्यापार का विस्तार, दूर–संचार, वित्तीय सहयोग व समन्वय बहुराष्ट्रीय निगम, तकनीकी एवं वैज्ञानिक सहयोग, सांस्कृतिक सहयोग, स्थानान्तरण एवं शरणार्थी समस्या तथा अमीर एवं गरीब देशों के संबंध आदि। जाहिर है कि वैश्वीकरण ने जहाँ एक तरफ मुक्त बाजार की दलील पेश की वहीं दूसरी तरफ विश्व में एक 'कमोडिटी' के तौर पर देखने की प्रवृत्ति विकसित हुई।

समसामयिक विश्व में वैश्वीकरण का विवाद विसंगतियों के बावजूद आधुनिक राष्ट्र राज्यों के विकास की अनिवार्य शर्त बनता जा रहा है। इसके सकारात्मक व नकारात्मक दोनों ही पक्ष है। वैश्वीकरण प्रतिस्पर्धा को बढ़ाता है जिसमें घरेलू उद्योंगों की कार्यकुशलता में वृद्धि होती है तथा साथ–ही–साथ उत्पादन लागत में कमी होती है जिससे वस्तुओं वं सेवाओं की कीमत में भी अवमूल्यन होता है अतः इस प्रक्रिया में सबसे अधिक लाभ उपभोक्ता वर्ग को होता है।

वैश्वीकरण के कारण आज शिक्षा के क्षेत्र में भी क्रांति अर्थ है, जिससे नई–नई तकनीकियों का शिक्षा में समावेश किया जा रहा है। जहां पहले शिक्षा केवल व्याख्यान विधि द्वारा पाठ्यक्रम के आधार पर दी जाती थी, वहाँ आज प्रोजेक्टर, वीडियों कॉफ्रेसिंग के आधार पर प्रश्नोत्तर विधि, प्रदर्शन विधि आदि के माध्यम से दी जाने लगी है, जिससे आज शिक्षा के क्षेत्र में निर्मितवाद, अभिसंज्ञानवाद आदि नए समप्रत्यय उभर रहे है।

द्रुततर संप्रेषण यात्रा तथा सूचना प्रौद्योगिकी ने संसार को एक वैश्विक ग्राम का रूप दे दिया है। विभिन्न देशों के लोगों के बीच–विचार–विनिमय समानता एवं परम्पराओं को गति मिल रही है इस तरह देखने पर हम पाते है। कि वैश्वीकरण के गिनाएं जाने वाले लाभ हैं कि इसके परिणामस्वरूप अनेक विदेशी कम्पनियां आई जिससे रोजगार का सृजन हुआ। श्रमिकों के आर्थिक व सामाजिक स्तर पर सुधार हुआ हैं कुशल व प्रशिक्षित श्रमिकों की संख्या में वृद्धि हुई है। तथा नए मध्यम वर्ग का विकास हुआ और उनमें आत्मनिर्भरता आई है।

चूंकि साहित्य अपने समाज की शाब्दिक अभिव्यक्ति है और वह समाज के बाह्य और अंतिरिक स्वरूप में परिवर्तनों का निरीक्षण करता है और किसी भी तरह की घटना अथवा परिवर्तनों के पीछे छुपी हुई वास्तविकता को सामने लाता है। हिन्दी साहित्य ने बखूबी इस बात का चित्रण किया है कि किस प्रकार वैश्विक प्रतिस्पर्धा के कारण श्रमिक वर्ग में तनाव और कुंठा में वृद्धि हुई हैं। लीलाधर जगूड़ी जी इस बात को खुद से जोड़ते हुए कहते है–

"मेरी कथा
फावड़ा घिस जाने की है

कारखाना उजड़ जाने की
सड़क टूट जाने की है।"[2]

वैश्वीकरण ने साहित्य को नई दिशाओं की ओर उपमुख किया है दुनिया के ग्लोबल होने के साथ साहित्य भी इसके प्रभाव को सामने रखते हुए ग्लोबल हुआ है। अदिवासियों पर वैश्वीकरण का प्रभाव मुख्यतः भूमि से अलगाव और विस्थापन के रूप में हुआ। संजीव अपने उपन्यास 'धार' में इसे स्पष्ट करते हएु लिखते हैं– ''धार उपेक्षा, भूख गरीबी में लिपटी आरण्यमुखी आदिवासी अस्मिता में खलल तब नही पड़ती जब भूख उन्हे परेशान, अभाव उन्हें तोड़ने और मौसम की मार से जीना हराम हो जाता है, इन सब के तो वे अभ्यस्त है। खलल तब पड़ती है जब विकास के नाम पर कोई उनके गहरे शान्त जीवन को गंदला करने चला आता है। भरसक वे कंगाल हों लेकिन उनके नीचे खनिज और वन सम्पदा के कुबेर के खजाने हैं। उनके जीवन, यौवन और खजाने पर लार टपकाते दिकुओं से लेकर मल्टीनेशनल और उनके दलालों की नजर है और वे लूटने को अभिशप्त है।"[3]

वैश्वीकरण और उत्तर आधुनिकता ने स्त्री शोषण के नए आयाम खोल दिए है। स्त्री सबसे बड़ा उपभोक्ता वर्ग और सामान बेचने में सहायक बना दी गई है। डॉ0 शिवकुमार मिश्र ने अपने लेख– "रमैया की दुलहिन ने लूटा बजार" में इस सत्य को अभिव्यक्त करते हुए कहा है कि– "आज टी0वी0 चैनलों पर चौबीस घंटे छाए रहने वाले विज्ञापनों पर एक निगाह डालिए– दैहिक सुखभोगवाद के साधनों का प्रचार करते बच्चे– स्त्री–पुरूषों की एक भीड़, उनके हाव–भाव, उसकी भाषा उनका हर ढंग जो उनका नहीं, उन लोगों के द्वारा तय किया गया है जो उनका इस्तेमाल कर रहे है।"[4]

वैश्वीकरण के फलस्वरूप भारतीय ओद्योगिक श्रमिको पर भी नकारात्मक प्रभाव पड़े हैं। वैश्वीकरण के प्रभाव में श्रम कानूनों पर ढील दी गई परिणामस्वरूप अनौपचारिक क्षेत्र में काम करने वाले श्रामिकों में वृद्धि हुई और इनका सीमतीकरण हुआ। साहित्य की जगह प्रतिपक्ष की बेंच है। वह सदैव जो है उससे बेहतर चाहिए 'की कल्पना में इस तरह शामिल है कि जीवन में उसे लागू किया जा सके। समकालीन साहित्य समाज में फैले शोषण, अत्याचार और इनसे संबद्ध अनेक सवालो–पूंजीवाद, उपभोक्तावाद, विस्थापन प्रदूषण, वैश्वीकरण के विरूद्ध एक अनवरत मानवीय प्रतिरोध है, प्रतिवाद है। और बकौल मुक्तिबोध साहित्य को सच को पूरी ताकत से बाहर लाने का काम करना होता है।'

नवउपनिवेशवाद वैश्वीकरण हमारी विकासशील अर्थव्यवस्था का अदृश्य संचालक है। इस अदृश्य आग्रही संचालक अर्थात् पूंजीवाद, बजारवाद और तानाशाही के सहमेल से उदय प्रकाश अपनी कहानी 'पीली छतरी वाली लडकी' में जो चरिच गढ़ते हैं वो–'खाऊ, तुंदियल, कामुक, लुच्चा, जालसाज और रईस' है। उसे भारतीय किसानों की गरीबी या बदहाली से कुछ भी लेना देना नहीं है। सोयाबीन, सूरजमुखी और तिलहन जैसी फसल को चौपट करना हो, वह कहता है ' 'मरने दो स्स्साले किसानों को ओके।

'मैंगोसिल' उत्तरआधुनिक विकासजन्य विनाश की ओर संकेत करने वाली रूपक कहानी है जिसमे गरीब देशों के बच्चे मैंगोसिल नामक बीमारी से पीड़ित हैं। इस रोग में बच्चे का सिर तेजी से बदलेगा और इतना बढ़ जाता है कि ढ़ापा नही जा सकता, असह्य दर्द से पीड़ित बच्चे की अल्पायु में ही मृत्यु होगी। कहानी में बच्चे सूरी का सिर प्रतीक है किसी भी देश के असंतुलित विकास का। भूमंडलीकृत, मल्टीनेशनल्स मेट्रो युग में गरीब देशों में भी विकास का दौर बढ़ा है परन्तु एकांगी। संपन्न वर्ग के लिए मेट्रा रेल, शॉपिंग मॉल और पांच सितारा होटलों के निर्माणार्ध निस्वजन के अस्तित्व को मिटा देते हैं। इस प्रकार एक सक्रिय कार्यवाही के रूप में संजीव के उपन्यास–'धार', 'फांस,' 'जंगल जहां शुरू होता है, 'पांव तले की दूब', रणेन्द्र के उपन्यास–'गायब होता देश' और 'ग्लोबल गांव का देवता', उदय प्रकाश की–'पॉल गोमरा का स्कूटर,' 'वॉरेन हेस्टिंग्स का सांड़,' मनोहर श्याम जोशी की 'कुरू–कुरू स्वाहा,' 'हरिया हरक्यूलीज की हैरानी,' इत्यादि उल्लेखनीय हैं।

इस प्रकार समग्र रूप से विश्लेषण करने पर निष्कर्षतः यह बात कही जा सकती है कि ''यत्र विश्व भवत्येक नीड़'' अथर्ववेद की यह भावना संपूर्ण विश्व को एक घेसले के रूप में देखती है लेकिन वैश्वीकरण के मूल में 'वसुधैव कुटम्बक जैसी कोई भावना नही है। बल्कि यह पूंजीवादी शोषण का ही पर्याय है जिसमें वस्तुओं, सेवाओं, कच्चा माल, पूंजी, प्रौद्योगिकी, उत्पादन के साधानों आदि का बिना किसी प्रतिबंध के स्वतंत्र रूप से विश्व के देशों में प्रवाह हो रहा है। डॉ0 सच्चिदानन्द सिन्हा इसे स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि––''इसमें बचपन मे वर्जना और प्रताड़ना है, जवानी में स्पर्द्धा और असुरक्षा का तनाव है और बुढ़ापे में अर्थहीनता का अवसाद। इस तरह वैश्वीकरण ने आज हमें आधुनिक सभ्यता हासिल करने का अभियान देकर एक ऐसे मुकाम पर ला दिया है जहाँ हम विश्व को जीतकर जीवन को हार रहे हैं।''

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि जब किसी सिद्धांत का प्रार्दुभाव होता है तो उसके कुछ फायदे भी होते हैं। और कुछ नुकसान भी। और मुक्तिबोध ने कहा है कि –'जीवन विवेक ही साहित्य विवेक है।' और आज का साहित्य वैश्वीकरण की एकलध्रुवीयता के खिलाफ मजबूती से खड़ा हो उसकी एकमेव सत्ता का प्रतिवाद कर रहा है।

संदर्भ

1. कास्त्रों फिदेल, गुप्त, रामकिशन, नवउदारवाद का फासीवादी चेहरा, पृष्ठ सं0 59–60
2. जगूड़ी, लीलाधर, कविताकोश
3. संजीव, धार, नई दिल्ली, राधाकृष्ण प्रकाशन,
4. मिश्र, डॉ0 शिवकुमार, रमैया की दुलहिन ने लूटा बाजार, सम्प्रेषण 133,
5. उदयप्रकाश, पीली छतरी वाली लड़की, नई दिल्ली वाणी प्रकाशन,
6. सिंह, बच्चन, हिन्दी आलोचना के बीच शब्द, नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन,
7. रणेन्द्र, ग्लोबल गांव का देवता, (2009), नई दिल्ली भारतीय ज्ञानपीठ, 9788126318346.
8. रणेन्द्र, गायब होता देश, (2014), नई दिल्ली, वेग्विन बुक्स, 9780143420699.
9. विमल, गंगाप्रसाद, (2014), आधुनिकता–उत्तर आधुनिकता, दिल्ली, नई किताब.